दूसरी नज़र

■ पी चिदंबरम

घोषणापत्र से बौखलाई भाजपा

चौवन पेज के दस्तावेज ने कबूतरों के बीच बिल्ली छोड़ दी है। छप्पन इंच सीने वाली शेखी को अगर नजरअंदाज कर दीजिए तो यह भाजपा कबूतरों का झुंड है, और 2019 के लोकसभा चुनाव के लिए कांग्रेस पार्टी का चुनावी घोषणापत्र जारी होने के बाद भाजपा जिस तरह से बौखला गई है उसने यह साबित भी कर दिया है।

आमतौर पर चुनावी घोषणापत्र की चर्चा बहुत कम समय ही होती है। दो अप्रैल को कांग्रेस का चुनावी घोषणापत्र जारी होने के कुछ ही मिनटों में सुर्खियां बन गया था, लेकिन साथ ही जैसे-जैसे हरेक घंटा गुजरता गया, यह एक नया आयाम हासिल करता गया। दिन खत्म होने तक और निश्चित रूप से पांच अप्रैल तक घोषणापत्र के प्रमुख वादे हर शहर, कस्बे और यहां तक कि गांवों जो शहरी इलाकों के करीब हैं, तक पहुंच चुके थे। मुझे पक्का भरोसा है कि घोषणापत्र के प्रमुख वादों को टेलीविजन और चुनाव प्रचार अभियान में लगे लोग अगले कुछ दिनों में सब तरफ पहुंचा देंगे। यह संदेश इतना शक्तिशाली संदेश है कि आम लोगों में इसकी चर्चा होनी ही है।

आखिर कांग्रेस के इस चुनावी घोषणापत्र में ऐसा अलग क्या है, जिसने इसे कुछ ही घंटों के भीतर शहरों से लेकर गांव तक में चर्चा में ला दिया? इसका जवाब है कि कांग्रेस का चुनावी घोषणापत्र लोगों की आवाज है। मैं पूरे विश्वास से कह सकता हूं कि इसका हर विचार या वादा भारत के नागरिकों का सुझाया है, जो लिखित में भी मिले और देश भर में एक सौ चौहत्तर जगहों पर किए गए विमर्श में सामने आए। इसे तैयार करने वालों ने स्पष्ट भाषा में मिले इन विचारों को बहुत ही आसान वाक्यों में लिख डाला।

बौखलाई भाजपा

सामान्य तौर पर यह सत्तारूढ़ पार्टी का घोषणापत्र है, जिसका कि विपक्षी दल विरोध करते हैं। हाल के समय में मुझे एक भी ऐसा मौका याद नहीं पड़ता जब सत्तारूढ़ दल ने किसी विपक्षी दल के घोषणापत्र को लेकर इस तरह से जोरदार हमला बोला हो। इससे तो यह सवाल उठता है कि आखिर ऐसा क्यों?

मैं कुछ बातों के बारे में सोच सकता हूं जिनसे भाजपा बौखलाई होगी। सबसे पहले तो रोजगार का वादा। इस समय बेरोजगारी की दर पिछले पैंतालीस साल में अपने उच्चतम स्तर 6.1 फीसद पर है। इसके स्पष्ट और तत्काल समाधान थे, लेकिन श्री मोदी ने स्पष्ट समाधान की अनदेखी करते हुए हर साल दो करोड़ रोजगार पैदा करने का वादा किया। बदले में यह वादा भाजपा के गले की हड्डी बन गया। रोजगार सृजन के बजाय भाजपा सरकार ने नोटबंदी और खामियों भरा जीएसटी लागू कर- के रोजगार ही खत्म कर डाले। एनएसएसओ की आधिकारिक रिपोर्ट बताती है कि चार करोड़ सत्तर लाख रोजगार खत्म हो गए। कांग्रेस के चुनावी घोषणापत्र में उन स्पष्ट उपायों की पहचान की गई है जिनसे बड़ी संख्या में बेरोजगारों को रोजगार दिया जा सके। इसका एक आसान तरीका यही है कि सरकार में खाली पड़े सारे पद भरे जाएं। इससे करीब चौबीस लाख नौजवानों को काम मिल जाएगा।

अगला, कृषि क्षेत्र की हालत दुरुस्त करने के लिए घोषणापत्र में कांग्रेस ने साहसी दृष्टिकोण अपनाया है। जैसा कि किसान कर्ज माफी के विचार का भाजपा ने उपहास किया था, कांग्रेस के चुनावी घोषणापत्र में बकाया कृषि कर्ज माफ करने का एलान किया गया है। यह ध्यान देने योग्य है कि जहां भाजपा ने दिवालिया कंपनियों के करीब 84,585 करोड़ रुपए के कर्ज माफ कर दिए थे, कांग्रेस ने किसान कर्जमाफी को न्योचित ठहराया। घोषणापत्र में दो और वादे हैं जो किसानों के हितों से जुड़े हैं- किसानों के लिए अलग बजट और बकाया कर्ज नहीं चुका पाने वाले किसानों पर कोई आपराधिक मामला दर्ज नहीं करने की बात। घोषणापत्र में कृषि विस्तार सेवाओं की वापसी का भी वादा है। इसके अलावा कृषि उपज बाजार कानून को रद्द कर इसकी जगह आवश्यक वस्तु अधिनियम लाना और देश के हर जिले में एक कृषि कॉलेज खोलने और पशु चिकित्सा विज्ञान कॉलेज खोलने का वादा भी है।

शर्माना क्या

कांग्रेस के चुनावी घोषणापत्र में संवेदनशील मुद्दों के समाधान को लेकर शर्म से भागने की कोई बात नहीं है। इसमें महिला आरक्षण बिल पास कराने और सभी सरकारी पदों में एक-तिहाई पदों पर महिलाओं को भर्ती करने का वादा किया गया है। घोषणापत्र में एससी, एसटी और ओबीसी समुदाय के लिए समान अवसर आयोग बनाने और निजी उच्च शिक्षा संस्थानों में आरक्षण के लिए सकारात्मक प्रयास करने का वादा किया गया है। घोषणापत्र में वरिष्ठ नागरिकों, धार्मिक अल्पसंख्यकों, दिव्यांगों और एलजीबीटी समुदाय के लिए भी कई वादे किए गए हैं। घोषणापत्र को पढ़ने के बाद हर वर्ग अपने को इसमें शामिल पाएगा।

कांग्रेस के घोषणापत्र में राष्ट्रीय सुरक्षा, आंतरिक सुरक्षा, विदेश नीति जैसे मुद्दों को शामिल किया गया है और जिन नीतियों में भाजपा नाकाम रही है, उसे चुनौती दी गई है। जब श्री जेटली ने सवाल उठाए, कांग्रेस ने तथ्यों के साथ पलट कर उनका जवाब दिया और साथ में सवाल भी दागे। घुसपैठ की कोशिशों की संख्या क्यों बढ़ी, जम्मू-कश्मीर में घुसपैठियों और हताहतों की संख्या में इजाफा क्यों हुआ? 2015 में त्रिपुरा से, 2018 में मेघालय से और एक अप्रैल, 2019 को अरुणाचल प्रदेश के तीन जिलों से अफस्पा क्यों हटा लिया गया? क्या भाजपा जबरन लोगों के गायब हो जाने, यौन हिंसा और यातनाओं का समर्थन कर रही है? जब संसद ने भारत रक्षा कानून और गैरकानूनी गतिविधियां (निरोधक) कानून बना रखा है तो फिर औपनिवेशिक काल के प्रावधान धारा 124 ए (राजद्रोह) को लागू करने की जरूरत क्यों पड़ी?

यह तो साफ है कि कांग्रेस अपनी लड़ने की क्षमता को फिर से पहचान चुकी है और भाजपा से टक्कर लेने की इच्छुक है। मैं बहस का स्वागत करता हूं, लेकिन मैं इस बात से बहुत ही निराश हूं कि प्रधानमंत्री के भाषण दिनों-दिन कटु होते जा रहे हैं।

विचारों की लड़ाई

भाजपा ने अभी तक अपना घोषणापत्र जारी नहीं किया है। पहले चरण का मतदान ग्यारह अप्रैल को है, रविवार से चार दिन बाद। मुझे संदेह है कि कांग्रेस के घोषणापत्र के जवाब में भाजपा अपने घोषणापत्र को फिर से तैयार करने में लगी है। यह अच्छा है। भाजपा अब तक विचारों के युद्ध में उलझी रही है, वह उग्र-राष्ट्रवाद और गाली में भरोसा रखती है। अगर भाजपा अपने प्रचार अभियान को विचार और तर्कों पर ले आती है तो मैं इसका स्वागत करूंगा।

मैं कई चरणों वाले मतदान के विचार का समर्थक नहीं हूं, लेकिन जो माहौल है, उसमें संभवतः इससे बचना मुश्किल है। चुनाव के चरणों के बीच मीडिया को तटस्थ रह कर रिपोर्टिंग करनी चाहिए और चुनाव आयोग को बिना किसी भेदभाव के नियमों लागू करना चाहिए। बाकी तो भारत के लोगों को देखना है।

भैंस के गले की घंटी

तीरंदाज

■ अश्विनी भटनागर

पिछले दिनों एक गुनगुनी सुबह चुनाव की सरगर्मी देखने निकल पड़े। पर घर से निकलते ही, कुछ दूर चलते ही, राजमार्ग पर एक मोड़ आ गया, जिससे गांव की तरफ एक पतली सी, मुरझाई हुई सड़क जा रही थी। गाड़ी उधर ही मुड़वा दी। सड़क पर टायर पड़ते ही पता लग गया कि गांव की पंचायत और सरकारी जूनियर इंजीनियर साहब लोगों के बीच अच्छी साठगांठ है। शाम को समिति की बैठक में उनके बीच खूब हंसी-ठट्ठा होता होगा।

सड़क के दोनों तरफ सब्जी के खेत थे। एकदम ताजी सब्जियां लहलहा रही थीं। मन हुआ कि कुछ उखाड़ लें। सुबह का समय था, सो चौकीदार रात भर सोने के बाद भोर अंधेरे शायद मैदान पानी करने चला गया था। दूर-दूर तक सन्नाटा था। हां, कहीं झुरमुट से दो कुत्तों के भौंकने की आवाज जरूर आ रही थी। पर उनकी क्या परवाह थी? पालतू थे। जरा-सा पुचकारते तो वे दुम हिला देते।

> 'साहब', उसने मुस्कुरा कर कहा, 'चोर हमें नारों की घंटी सुना कर असली मुद्दों को कभी का गायब कर चुके हैं। हमारी भैंस तो गई- अब क्या राष्ट्रवाद और क्या विकास। बस, घंटी बजा रहे हैं और आरती गा रहे हैं।'

'जो उखाड़ना है, उखाड़ लीजिए। मौका अच्छा है।' हमारे हमसफर, वरिष्ठ सहयोगी ने उकसाया।

पर हम सब्जबाग देखने में इतने मशगूल हो गए थे कि कुछ उखाड़ नहीं पाए। सोचते ही रह गए। हमारी अकर्मण्यता की वजह से चौकीदार बदनाम होने से बच गया। अब उसे चौकीदार ही चोर है की लानत नहीं उठानी पड़ेगी।

चुनाव देखने निकले थे, सो चायवाले से मुलाकात तो लाजमी थी। सुबह का समय भी था। पेट में गुबार उठ रहा था। चाय पर चर्चा से उसके निकलने की प्रबल संभावना थी। वैसे भी, चायवाले की प्रभुत्ता हमारी लोकतांत्रिक प्रक्रिया की वैदिक काल से रीढ़ रही है। ऐसा शास्त्रों में लिखा है। आदि पत्रकार नारद मुनि भी ब्रह्मज्ञान पाने के लिए चायवाले के पास ही जाते थे।

चायवाले की भट्ठी पर चाय तो उबल रही थी, पर वह उससे मुंह मोड़े देवी-देवताओं को नमो नमो कर रहा था। शायद चौकीदार ही चायवाला था, जो रात भर प्रहरी की नींद सोने के बाद, सुबह आनन-फानन अपनी असली दुकान खोलने में लगा था। थोड़ा लेट हो गया था, पर उसे परवाह नहीं थी। उसके ग्राहक पक्के थे। शायद इसीलिए कई सारे ग्राहक मुंह बाए चाय का इंतजार तो जरूर कर रहे थे, पर आश्वस्त थे कि जैसे ही चायवाले की कृपा हुई, अच्छे दिनों की पिछली कड़ी आज की कड़ी से जुड़ जाएगी।

'हां भई, क्या चल रहा है यहां?' हमारे उत्साही सहयोगी ने चुनावी नब्ज टटोलने के लिए अपनी उंगलियों को हवा में लहराया। वे चुनाव अनंत काल से कवर करते आए हैं और उनका कहना है कि सारा चुनाव चाय की दुकान तक ही सीमित होता है। वे कहते हैं कि क्या है कि अंग्रेज तो चले गए, पर चायवाला छोड़ गए थे। सूट-बूट की सरकार जो चलवानी थी उनको। बड़े चालू थे। सारा दोष नेहरू का है। खुद तो अचकन पहनते थे, पर जैकेट और सूट औरों को सिलवा गए। ठीक अंग्रेजों की तरह वे 'एंटी नेशनल' थे, राष्ट्रवादी नहीं थे।

'क्या आप राष्ट्रवादी हैं?' हमने चायवाले से पूछा।

'हां, सौ फीसद।' उसने अपना भरा-पूरा सीना ठोक कर कहा। 'राष्ट्रवाद मेरी रग-रग में वैसे ही लहरें मारता है जैसे गंगा मैया अस्सी घाट पर सावन में हिलोरें लेती हैं। भारत माता की जय!' उसने तुरंत नारा लगाया।

हमने औरों की तरफ देखा। 'आप लोग भी राष्ट्रवादी हैं?' पास बैठे कुछ लोगों ने गाय माफिक सिर हिला दिया। शायद हम जैसे शहर से आए सूट-बूट टाइप के सरकारी सांड़ों से सींग लड़ाना नहीं चाहते थे।

पर अचानक दूर बेंच से आवाज आई। 'मैं राष्ट्रवादी नहीं हूं।'

हम चौंक गए। 'तो क्या हैं?'

'देशभक्त।' उसने पास आकर कहा।

'एक ही बात हुई न?' हमारे सहयोगी जी ने कहा।

'नहीं।' उसने तापक से कहा।

'क्या फर्क है दोनों में?'

'बहुत बड़ा फर्क है, जो मैं गांव वालों को समझाता रहता हूं।

'मतलब?'

'सर, मैं इस गांव में शिक्षक हूं और मैं इन्हें समझाता हूं कि राष्ट्रभक्ति सहज प्राकृतिक होती है। हममें से कौन ऐसा है, जिसे अपनी मिट्टी से प्यार नहीं है? हम सब एक ही मिट्टी की अलग-अलग पौध हैं, एक जंगल की माफिक। कोई पेड़ है, तो कोई उस पर चढ़ी बेल है। सब मिलेजुले हैं। देशभक्त इस जंगल को पूजता है, जो अपने आप उगा है, रोपा नहीं गया है।

पर जब देशभक्ति से राष्ट्रवाद की तरफ हम जाते हैं तो मिट्टी के दुलार से उपजा जंगल कट जाता है। राष्ट्रवाद अलग-अलग खेत बना देता है। एक तरह की पौध एक तरफ, तो दूसरी दूसरी तरफ। बीच में बंटवारे की मेढ़। गेहूं ज्यादा बोना है, बाजरा कम। चौलाई तो उखाड़ ही फेंकनी है, क्योंकि साहब लोगों को बिलकुल पसंद नहीं है। सर, देशभक्ति खुद-ब-खुद उत्पन्न होती है, जबकि राष्ट्रवाद फसल पाने के लिए बोया जाता है। मैं अपनी बुआई नहीं चाहता हूं। स्वछंद जंगल बना रहना चाहता हूं। इसीलिए मैं राष्ट्रवादी नहीं हूं। ज्यादातर लोग देशभक्ति और राष्ट्रवाद को एक ही समझते हैं और उनको जानबूझ कर कन्फ्यूज भी किया जाता है। मैं इन्हें अकसर कहता हूं- अपना जंगल संभालो। राष्ट्रवाद उसे काटे लिए जा रहा है।'

नवयुवक शिक्षक की बात सुन कर हम सन्नाटे में आ गए। चाय भी खत्म हो चुकी थी। चायवाला अब पकौड़ी तलने की तैयारी में लग गया था। हम लोग गाड़ी की तरफ बढ़ने लगे। एक प्रौढ़ साथ में हो गया। 'साहब', उसने धीरे से कहा, 'गांव में जब चोर भैंस चुराने आते हैं, तो सबसे पहले उसके गले में बंधी घंटी उतारते हैं। फिर भैंस लेकर एक चोर पूरब दिशा में भाग जाता है। दूसरा घंटी बजाता पश्चिम दिशा में भागता है। जाग होने पर लोग समझते हैं कि चोर पश्चिम की ओर भैंस के साथ भाग रहा है, क्योंकि घंटी की आवाज उधर से ही आ रही है। जब वे उधर दौड़ते हैं तो उनके हाथ फेंकी हुई घंटी लगती है। भैंस निकल चुकी होती है।'

'साहब', उसने मुस्कुरा कर कहा, 'चोर हमें नारों की घंटी सुना कर असली मुद्दों को कभी का गायब कर चुके हैं। हमारी भैंस तो गई- अब क्या राष्ट्रवाद और क्या विकास। बस, घंटी बजा रहे हैं और आरती गा रहे हैं।'

सियासी विरासत, सामंती अहंकार

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

कांग्रेस पार्टी का घोषणापत्र जिस दिन राहुल गांधी पेश कर रहे थे पिछले हफ्ते, मैं दूर किसी गांव में थी, लेकिन गांव में टीवी था, तो मैंने ध्यान से पूरा समारोह देखा। बहुत ध्यान से मैंने कांग्रेस अध्यक्ष का भाषण सुना। सुनने के बाद ऐसा लगा जैसे मैंने किसी राजा का भाषण सुना हो, जिसमें वे अपनी दरियादिली दिखाने के वास्ते अपनी प्रजा को दान कर रहे हों कई सारी नेमतें। रोजगार, नगद पैसा, स्कूल, स्वास्थ्य सेवाएं और किसानों के लिए और भी बहुत कुछ। एक अलग किसानों का बजट और यह वादा भी कि अगर कोई किसान अपना कर्ज लौटा न सके, तो उसको अपराध नहीं माना जाएगा कांग्रेस का दौर वापस जब आएगा।

अध्यक्ष महाराज का ध्यान उस दिन खासतौर पर अपनी प्रजा के उस वर्ग पर आकर्षित था, जो गरीबों में सबसे गरीब माने जाते हैं। उनके लिए यह नारा था : गरीबी पर वार, बहत्तर हजार। ऐसे बोले कांग्रेस अध्यक्ष जैसे कि यह रकम अपनी जेब से निकाल कर सीधा गरीबों को दे रहे हों। लेकिन ऐसा तो है नहीं। यह पैसा इस देश के उन मुट्ठीभर लोगों का है, जो ईमानदारी से कर देते हैं सरकार को। जिस दिन न्याय (न्यूनतम आय योजना) लागू होगी, इन करदाताओं के टैक्स बढ़ जाएंगे, क्योंकि कहीं न कहीं से लाना होंगे वे तीन सौ साठ लाख करोड़ रुपए, जिसके बिना न्याय असंभव है।

> क्या इन सामंतवादी तरीकों पर सवाल नहीं उठाने चाहिए? क्या उन वारिसों को अस्वीकार करने का साहस नहीं दिखाना चाहिए, जो जनता की सेवा के बहाने सिर्फ अपनी और अपने परिवार की सेवा करते आए हैं?

राहुल में लेकिन गरूर इतना था कि उन्होंने ध्यान ही नहीं दिया इस बात पर। बस वादे सुनाते गए, सुंदर सपने दिखाते गए जैसे यह सब वे अपने निजी बल पर कर सकते हों। बिल्कुल ऐसा कभी किया करते थे राजे-महाराजे। सो, इस दृश्य को देख कर मुझे याद आया कि मैं वंशवाद का इतना विरोध क्यों करती हूं। याद आया कि भारत के लोकतंत्र को किस तरह इस 'समाजवादी' सामंतवाद ने खोखला कर दिया है।

इतना खोखला हो गया है हमारा लोकतंत्र कि हमारे तकरीबन सारे राजनीतिक दल अब विरासत में देते हैं राजनेता अपने वारिसों को। पूरी सूची पेश करने की जरूरत नहीं है, क्योंकि आप गूगल करके देख सकते हैं कि किस तरह कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक हर राज्य में अब एक किस्म का सामंतवाद आ चुका है। सामंतवाद की समस्या है कि उसके आने से वारिसों को इतना घमंडी बना देता है कि उनको लगने लगता है कि राज करना उनका जन्मसिद्ध अधिकार है। ऐसी भावना राहुल गांधी में जाहिर ज्यादा ही होगी, क्योंकि जहां बाकी वारिस सिर्फ एक राज्य चलाने की उम्मीद रखते हैं, राहुल गांधी तो भारत चलाने की उम्मीद रखते हैं।

सो, जबसे एक चायवाले ने उनसे उनका वह अधिकार छीन लिया है, जो वे अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं, तबसे जब भी राहुल गांधी मोदी के सामने पेश आए हैं, तो उन्होंने इतना घमंड दिखाया है कि प्रधानमंत्री पद की गरिमा को भी भूल गए हैं कई बार। पहली बार ऐसा पेश आए लोकसभा के अंदर, जब उन्होंने भाजपा सांसदों की तरफ इशारा करते हुए कहा 'आपका प्रधानमंत्री'। हंगामा मच गया, जिसमें ऊंची आवाजों में सांसदों ने याद दिलाया राहुल गांधी को कि प्रधानमंत्री देश के होते हैं, किसी विशेष दल के नहीं।

राजा राहुल कहां सुनने वाले थे यह बात, सो जब भी मोदी के सामने आए, उन्होंने स्पष्ट किया कि वे उनकी जरा भी कद्र नहीं करते हैं। अपने भाषणों में इस बात को और भी ज्यादा स्पष्ट किया राजनीतिक भाषा की सारी मर्यादाएं तोड़ कर। सो, कभी मोदी को चोर कहते हैं, तो कभी उनको झूठा कहते हैं। मोदी की कद्र उन्होंने तब भी नहीं की, जब बालाकोट के हमले के बाद उन्होंने वायु सेना को बधाई दी, लेकिन मोदी की हिम्मत को नहीं। क्या वायु सेना पाकिस्तान के अंदर घुस कर हमला कर सकती थी बिना प्रधानमंत्री की इजाजत के?

इतनी मगरूरी से पेश आने लगे हैं कांग्रेस अध्यक्ष जैसे वे अभी से बन गए हों भारत के न सिर्फ प्रधानमंत्री, बल्कि सम्राट। ऐसा क्यों न हो, जब स्वतंत्र भारत के सत्तर वर्ष के इतिहास में से उनके परिवार का राज रहा है पचपन वर्षों का? जहां भी सामंतवाद कायम हो जाता है- चाहे वह समाजवाद के भेस में ही क्यों न हो- वहां प्रजा इतनी दब जाती है कि राजा साहब की कोई भी ज्यादती सह लेती है चुप करके। सो, हमारे लोकतांत्रिक भारत में मतदाता सहते हैं चुप करके यह भी कि उनके प्रतिनिधि चुनाव जीतने के बाद आलीशान कोठियों में रहते हैं, विदेशों में छुट्टियां मनाने, इलाज करवाने जाते हैं जनता के पैसों से, और अपने बच्चों को प्राइवट स्कूलों में भेजते हैं, क्योंकि जानते हैं कि जो स्कूल और कॉलेज उन्होंने जनता के लिए बनाए हैं, वे बिलकुल बेकार हैं।

चुनाव के इस मौसम में क्या हमको इन चीजों के बारे में सोचना नहीं चाहिए? क्या इन सामंतवादी तरीकों पर सवाल नहीं उठाने चाहिए? क्या उन वारिसों को अस्वीकार करने का साहस नहीं दिखाना चाहिए, जो जनता की सेवा के बहाने सिर्फ अपनी और अपने परिवार की सेवा करते आए हैं? यह काम वास्तव में हम पत्रकारों का है, लेकिन हम कांग्रेस पार्टी का साथ हमेशा देते आए हैं, क्योंकि हम अपने आप को 'सेक्युलरिज्म' के ठेकेदार मानते हैं। मोदी ने गोरक्षकों को खुली छूट देकर शायद अपने शासनकाल की सबसे बड़ी गलती की, क्योंकि ऐसा करके साबित कर दिया कि वास्तव में कांग्रेस के दौर सेक्युलर रहे हैं और उनका दौर पूरी तरह सांप्रदायिक।

सवाल है कि अगर यह बात सच भी हो, तो क्या हमारा फर्ज नहीं बनता है सेक्युलर दलों की सामंतवादी आदतों की तरफ ध्यान दिलाना? इस फर्ज को हमने नहीं निभाया है। सो, आज राहुल गांधी इतना घमंड दिखाते हैं जैसे वे चुनाव जीतने नहीं निकले हैं, अपना जन्मसिद्ध अधिकार वापस लेने आए हैं।

जो वादा किया वो निभाना पड़ेगा

बाखबर

■ सुधीश पचौरी

सबसे मनोरंजक दृश्य तब दिखते हैं, जब गरमी की इस तपन में कोई नामी-गिरामी नेता वोट खींचने की खातिर साक्षात जनता के बीच जाता है। इस सप्ताह ऐसे तीन दृश्य दिखे।

एक दृश्य में हेमा मालिनी मथुरा के पास के एक गांव के गेहूं के एक खेत में जाकर गेहूं की बालें काटती दिखीं! साथ में उनके समर्थक-सहायक खड़े रहे! बड़ी मेहनत से उन्होंने एक हंसिया से गेहूं की कुछ बालें काटीं। फिर एक हाथ में कुछ बालें और दूसरे में हंसिया लिए जब उन्होंने कैमरे के आगे गेहूं काटने वाली का 'पोज' दिया, तो हमें तो 'मदर इंडिया' की नरगिस की तरह नजर आईं!

चुनाव जो न कराए थोड़ा! जनता से 'जुड़ने' के लिए नेताओं को क्या-क्या पापड़ नहीं बेलने पड़ते! चाहे कुछ देर के लिए सही, 'वोट' की खातिर बड़े-बड़े सितारों को जमीन पर उतरना पड़ता है!

ऐसी ही चिलचिलाती गरमी में प्रियंका गांधी ने एक रोड शो गाजियाबाद में दिया! अच्छी भीड़ जुटी दिखी। गाड़ी रूपी रथ के ऊपर खड़ी प्रियंका गांधी सड़क के आजू-बाजू खड़ी जनता का हाथ जोड़ और मुस्करा कर अभिनंदन करती आशीर्वाद लेती दिखती थीं। एक चौराहे पर तो वे लोगों के सवालों का जवाब वहीं की वहीं देने लगीं। लोग बीच-बीच में टोकते जाते थे, लेकिन वे बिना रुके जवाब देती जाती थीं! साथ में प्रत्याशी डॉली शर्मा सबको नमन करती दिखती थीं।

> 'जनता के मूड' को इन दिनों सब जानना चाहते हैं और अपनी जनता है कि दिल की बात कभी बताती ही नहीं। उसके मूड को टटोलने के लिए चैनल तरह-तरह की कवायद करते हैं।

तीसरा शो दिया जयाप्रदा ने! वे अपने समर्थकों के साथ एक मंच से रैली को संबोधित कर रही थीं। एकदम साफ-सुथरी हिंदी में उन्होंने बताया कि जब वे सांसद थीं, तो उन्होंने रामपुर की जनता के कितने काम किए। उसके बाद उन्होंने अपना पल्लू आगे कर जनता से वोट का आशीर्वाद भी मांगा! अगर आजू-बाजू समर्थकों का हो-हल्ला न होता, तो सीन और भी 'पिक्चर परफेक्ट' होता!

लेकिन, चुनावों के मौसम में 'अनुमान की राजनीति' सड़क की राजनीति से हर हाल में अधिक दिलचस्प होती है। आप चैनलों के स्टूडियो के वातानुकूलित वातावरण में बैठ कर एक से एक मनपसंद आंकड़े उछाल सकते हैं और उनको उचित ठहराने वाले तर्क जुटा सकते हैं।

सड़क की गरमी और शोर-शराबे से मुक्त स्टूडियों में एकदम 'अविवारित रमणीय' का-सा मजा मिलता है।

कई चैनल, उनके एंकर-रिपोर्टर और चुनाव विश्लेषक चुनाव परिणामों के बारे में अपने-अपने अनुमानों को बेहद सावधानी के साथ प्रस्तुत करते दिखते हैं, उनके लिए जरूरी तर्क जुटाते हैं, आंकड़ों का विश्लेषण करते दिखते हैं!

ऐसे कार्यक्रम देख कर हमें तो 'मनमोदक' खाने जैसा मजा आता है! जब तक परिणाम नहीं आते, तब तक जितना बड़ा लड्डू चाहो, बनाओ और खाओ-खिलाओ! नो टैक्स!

एक शाम एनडीटीवी पर गहन विचार चल रहा था कि आने वाले दिनों में किसको कितनी सीटें मिलने वाली हैं? कांग्रेस के प्रवक्ता रोहन गुप्ता कहते हैं कि कांग्रेस को इस बार एक सौ अस्सी सीटें मिलने वाली हैं। स्मिता गुप्ता कहती हैं कि भाजपा को एक सौ अस्सी से दो सौ तक मिल सकती हैं, लेकिन जेडीयू के अजय आलोक कहते हैं कि एनडीए को साढ़े तीन सौ सीटें मिलनी हैं। सबका अपना-अपना अनुमान है। सबके अपने-अपने 'मनमोदक'!

'जनता के मूड' को इन दिनों सब जानना चाहते हैं और अपनी जनता है कि दिल की बात कभी बताती ही नहीं। उसके मूड को टटोलने के लिए चैनल तरह-तरह की कवायद करते हैं।

कुछ हिंदी चैनल संसदीय क्षेत्रों में जाकर दलों, स्थानीय प्रतिनिधियों और 'जनता' को जुटा कर प्रतिक्रियाओं को लाइव दिखाते हैं, ताकि बता सकें कि अमुक शहर की जनता का मूड किधर है?

ऐसे शो अक्सर शोर-शराबे और तू-तू मैं-मैं में निपट जाते हैं। एंकरों का अधिकतर समय लोगों को 'शांत' करने में निकल जाता है। यहां कोई किसी से हारता नजर नहीं आता।

लेकिन इंडिया टुडे का 'स्टॉक एक्सचेज' आंकड़ों के बिना बात नहीं करता। इस बार का प्रसारित 'ट्रेकर' करीब पौने दो लाख लोगों के साथ 'फोन' पर 'जनमत संग्रह' से बना था।

यों फोन से डाटा लेना एक बात है, व्यक्ति से आमने-सामने बात करना दूसरी बात, फिर भी फोन से लिया यह नया डाटा भी कम दिलचस्प न था!

नए 'ट्रेकर' ने बताया कि बालाकोट का मुद्दा अब बहुत कम प्रतिशत लोगों के लिए बड़ा मुद्दा रह गया है। उसके बरक्स रोजगार और विकास के मुद्दे ही प्रमुख हो गए हैं!

मगर लोकप्रियता के आंकड़े बताते हैं कि तिरपन प्रतिशत लोग पीएम को ही दोबारा पीएम के रूप में चाहते हैं, जबकि विपक्ष के नेता राहुल को पसंद करने वाले पैंतीस प्रतिशत हैं! दक्षिण में राहुल अधिक लोकप्रिय हैं, जबकि उत्तर में लोकप्रियता की दृष्टि से पीएम बहुत आगे हैं।

यही सर्वे अगर फोन पर न होकर आमने-सामने किया जाता तो आंकड़े कुछ और अधिक भरोसेमंद होते। कारण कि फोन पर बोलने वाले के दिल की बात सामने नहीं आती, जबकि आमने-सामने होने से किसी के दिल की बात छिप नहीं पाती। फिर एक सच तो कहता ही है यह 'पोल ट्रेकर'!

कांग्रेस का दुर्भाग्य है कि राहुल, सोनिया, मनमोहन, चिदंबरम आदि सभी बड़े-बड़े नेताओं की उपस्थिति में रिलीज किया गया लंबा-चौड़ा घोषणापत्र भी कोई धमाकेदार खबर न बना सका। हां, उसका शीर्षक 'हम निभाएंगे' जरूर कुछ काव्यात्मक नजर आया! एकदम एनजीओ छाप ठाठ! हमें तो इसमें पुराने गीत 'जो वादा किया वो निभाना पड़ेगा' और फैज के 'हम देखेंगे' के रिमिक्स का मजा मिला!

नई दिल्ली